International Journal of Multidisciplinary Education and Research
ISSN: 2455-4588; Impact Factor: RJIF 5.12
Received: 19-12-2018; Accepted: 23-01-2019
www.educationjournal.in
Volume 4; Issue 1; January 2019; Page No. 30-32

नागार्जुन के उपन्यासों की भाषा का सामाजिक जीवन पर प्रभाव

सीमा[1], डा0 दर्शना[2]

[1] शोधकर्त्ता, कलिंगा विश्वविद्यालय, नया रायपुर,, मध्य प्रदेश, भारत।

[2] शोध निर्देशक, कलिंगा विश्वविद्यालय, नया रायपुर, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश

भाषा विचारों की वाहिका हे। भाषा की सशक्तता, गम्भीरता, सजीवता, अनुरूपता और विचार करने की क्षमता उपन्यास को सप्राण बनाने में सहायक होती है। उपन्यासकार जिस ढंग से अपने विचार ओर भावनाओं को व्यक्त करता है उसे शैली कहते हैं। शैली भाषा के माध्यम से भावों को अभिव्यक्त करने की शक्ति है। भाषा की गति प्रवाह व दिशा शैली ही है। उपन्यासकार हेनरी जेम्स ने एक स्थल पर कहा है कि जिस तरह स्वर से रहित होने पर संगीत अपूर्ण है, उसी प्रकार शैली के अभाव में कोई रचना असम्पूर्ण है।

मूल शब्दः भाषा, सामाजिक, नागार्जुन

प्रस्तावना

भाषा भाव व विचारों को व्यक्त करने का सबसे सशक्त माध्याम है। यदि भाव व विचार सबल है किन्तु लेखक की भाषा उतनी समर्थ नहीं है, तो कवि अथवा लेखक अपनी अनुभूतियां एवं धारणाओं को पाठक तक नहीं पहुँचा सकता। भावों का सक्रंमण भाषा की समर्थता पर आश्रित है और भाषा की शक्ति, शब्द भण्डार, शब्द चयन और प्रयुक्त शब्दों की अर्थ शक्ति पर निर्भर होती है। इसलिए लेखक की अभिव्यंजन शक्ति की सार्थकता एवं शक्ति को आंकने के लिए उनकी भाषा का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। प्रत्येक कवि या लेखक ज्ञात अथवा अज्ञात रूप में प्रायः अपने युग का प्रतिनिधित्व करता है। युग निर्माता लेखकों की रचनाओं में उनकी शब्दावली में, उनके युग के संस्कृति संकेत रहते है। इसलिए सांस्कृतिक और सामाजिक इतिहास की दृष्टि से भी भाषा के अध्ययन की आवश्यकता होती है।

साहित्य की समीक्षा

दुःखमोचन (1957 ई0)

यह नागार्जुन का 'नायक प्रधान' सामाजिक उपन्यास है। इसमें दुःखमोचन, टेकनाथ, माया, कपिल, लीलाधर आदि मध्यमवर्ग के पुरूष प्रतिनिध पात्र हैं। उपन्यासकार ने इस पात्रों के माध्यम से सामाजिक असमानता, वर्ग–वैषम्य, शोषण तथा पूंजी का दोषपूर्ण वितरण आदि समस्याओं को चित्रित करने के प्रयास किये है। उपन्यास ने इन पात्रों के माध्यम से सामाजिक असमानता, वर्ग–वैषम्य, शोषण तथा पुजी का दोषपूर्ण वितरण आदि समस्यायों को चित्रित कने के प्रयास किये है। उपन्यास का प्रमुख पात्र दुःखमोचन अपने चारित्रिक गुणों से ग्रामीणों को प्रभावित करता है तथा गाँव में एकता, सहयोग, उदारता तथा समन्वय की भवना की अभिवृद्धि करता है तथा जनता का सच्चा सेवक होने के नाते निःस्वार्थ भावना से ग्रामीण जनता की सेवा करके समाज के लिए प्रगतिवादी कदम उठाता है। उसकी इस विशेषता के कारण ही लीलाधर अपनी भूल स्वीकार करता हुआ कहता है– "मैंने आज तक जीवन में कोई जिम्मेदारी नहीं निभाई, हमेशा भाता ही रहा हूँ। अब मेरी, तुम्हारी क्षमता के प्रति खोई हुई आस्था, मेरे अन्दर फिर वापस लौट आई है।" दुःखमोचन ग्रामीण जीवन की विडम्बनाओं के प्रति अत्यन्त चिन्तित रहता है। इसलिए माया तथा कपिल को पुनः विवाह के सूत्र में बाँधकर वह समाज के सम्मुख एक आदर्श प्रस्तुत करता है।

इस प्रकार 'दुःखमोचन' में चरित्र की प्रधानता को कायम रखने के लिए ग्रामीण पुन–निर्माण तथ रूढ़िवादी के पतन लिए महत्वपूर्ण कदम उठाया है तथा समाज में फैली कुरीतियों एवं अन्धवश्विासों को दूर करने के लिए ग्रामीण जनता को सराहनीय प्रदान किया है। उसने माया तथा कपिल का पुनर्विवाह, टेकनाथ की गौ–वध से मुक्ति, ग्रामवासियों के जले हुए मकानों का नवनिर्माण, शिक्षा तथा चिकितसा आदि प्रगतिशील कार्य सम्पन किये हैं। दुःखमोचन मध्यमवर्ग का आदर्श पात्र है। उसके जीवन का मुख्य लक्ष्य 'मानव–हित' में निहित है। वह ग्रामवासियों के उज्जवल स्वप्न को साकार करते हुए कहता है–"अपा सभी को अपनी–अपनी शक्ति के अनुसार कभी–न–कभी काम करना पड़ेगा। आगे हम बाँध तैयार करेंगे, पोखरों की मरम्मत करवाना, कुओं की खुदाई करवान, गांव की तरक्की के बहुत से कार्य करेंगे। सभी कार्य हम सकको एकजुट होकर करना होगा।"

नई पौध (1957 ई0)

यह उपन्यास व्यंग्यात्मक शैली में लिखा गया सामाजिक उपन्यास है। 'नई पौध' उपन्यास मिथिला अंचल की बस्ती के नए–पुराने संघर्षों को आंचलिक वातावण में प्रस्तुत करता है। उपन्यास में अनमेल विवाह की समस्या, परम्परागत रूढ़ियाँ प्रगतिशील विचारों से टकराकर टूट जाती हैं और प्रगतिशील विचारों को सफलता प्रदान करने में 'नई पौध' विजयी होती है।

प्रस्तुत उपन्यास में दिगम्बार तथा पाचस्पति पध्यमवर्ग के शिक्षित युवक हैं। सामाजिक और राजनैतिक चेतना फैलाने का श्रेय इन्हीं दोनों नवीन पात्रों को है। और बिसेसरी ने अनमेल विवाह जैसी कुरीति से मुक्त कराने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वह कहती है– "नाना आज रात एक कसाई को लेकार आ रहे है। धूमधमा से अपनी नतीन का जिबह करायेंगे।" उस समय माहे, दिनाई वाचस्पति आदि सामाजिक कुरीति के विरोध में आवाज उठाते हैं। दिगम्बार को यह प्रगतिशीलता अपने पिता से मिली है। दिगम्बर के पिता नीलकण्ठ कई बार राष्ट्रीय आन्दोलन में जेल गए थे। वे प्रगतिशील विचारों के समर्थक थे। इसी भावना से प्रेरित होकर वह गांव में 'बमपार्टी' स्थापित करता है और सामाजिक समस्याओं का प्रगतिशील आधार से निराकरण करता है।

वाचस्पति मध्यमवर्ग का शिक्षित सभ्य प्रगतिशील विचारों का नवयुवक है। वह केवल राजनैतिक भावना से ओत–प्रेत नहीं है,

अपितु सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूक भी है। दिगम्बार, जिसेसरी की कहानी सुनकर यह एक युवती के लिए उसका उद्धार करने के लिए प्रस्तुत होता है और बिसेसरी के मामा से कहता है आप दिगम्बर की काफी चर्चा हो चुकी है और हमने जो फैसला किय है वो अपाको मालूम हो गया होगा। व्यक्ति का संकट ही समाज का संकट है, और समाज का संकट ही सम्पूर्ण राष्ट्र का संकट है।"

'नई पौध' अपेक्षाकृत अधिक उदार एवं मानवीय दृष्टि लेकर गांव के रंगमच पर अवतरित हुआ है। एक गांव पृष्ठभूमि पर प्राचीन और नवीन का संघर्ष बड़ी सजीवता से चित्रित किया गया है। वाचस्पति दिगम्बर के प्रति गांव के सभी लागों में श्रद्धा उत्पन्न हो गई तथा गांव का मुखिया 'नई पौध' के प्रति अधिक–से–अधिक सेवेदनशील बन जाते हैं तथा अमुक पात्र मध्यमवर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले नवयुवकों की नवीन चेतना के वाहक, अन्याय के प्रति विद्रोह, जर्जर रूढ़ियों तथा पुरानी सामाजिक मान्यताओं का खण्डन व विरोध 'नई पौध' का प्रमुख उद्देश्य है।

उपन्यासों की भाषा

1 संस्कृत शब्द

नागार्जुन के उपन्यासों मे जनभाषा की और अग्रसर अथवा जनसाधारण में पूर्णतया प्रचलित हो चुके संस्कृत शब्दों का प्रयोग बहुताय से हुआ है। कुंजवान, बहिष्कार, ध्वज, शत–प्रतिशत, कुण्ठित, प्रभाती, समीर, स्वर्णिम, रात्रि, विस्मय, वज्रपात, निर्मूल, सिद्ध, कार्तिक, क्षण, स्त्री, विरक्ति, संक्रान्ति, गंन्थ, कौमुदी, महोत्सव, अंक उपद्रव, वाक्शक्ति, उपार्जित, स्मृति, शुद्ध इत्यादि कुछ इसी प्रकार के शब्द प्रयोग हैं। इसके अतिरिक्त संस्कृत भाषा के त्तसम शब्दों को अपभ्रंश करके प्रयोग करने की प्रवृत्ति भी उपन्यासों के ग्रामीण पात्रों में विद्यमान है। लेखक के वर्णन में भी अपभ्रंश शब्दों का प्रयोग हुआ है। ग्रामणीण पात्रों द्वारा प्रयुक्त भाषा के तत्सम शब्दों के अपभ्रंश रूपों में से कुछ निम्न है– ईसर परमेसर, अनपूर्ना, लक्षमी, बरमवध, दच्छिन, पूरब, धुजा, बराहमनी, निरवाह, सराध, परानी, कृस्न, गिरध्य, सिनेह, परारीसठा, बिस्वास आदि।

2 अंग्रेजी शब्द

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् अंग्रेजी देश वापिस चले गए किन्तु अपनी भाषा आचार विचार यही पर छोड़ गए। बास्तव मं वह इतने लंबे समय तक यहां रहे थे कि हमारी भाषा और संस्कृति उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रही थी। इसी कारण अंग्रेजी भाषा के अनेक शब्द है जो हमारे यहां की बोली भाषा के एकदम घुल मिल गए है एवं अपनी भाषा में से उन्हें निकला फेंकना सुगम नहीं है। नागार्जुन ने भी इस प्रकार लोक की प्रकृति में एकदम घुल मिल एग अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग अपने उपन्यासों में किया है। चुंकि नागार्जुन की प्रकृति लोकोन्मुख थी इसी कारण यह स्वभाविक भी है। ग्रेजुएट, कम्पनी, सर्किल, मैट्रिक, टेन्थ, बी.एन. डब्लु.आर., स्टीमर, मशीन, पैसेन्जर, ट्रेन, डिक्टेटर, पिकेटिंग, ड्यूटी, अटेस्ट कान्सटेबिल, पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट, लारी, टार्च, मोटर, कान्फ्रेन्स, मिनिस्ट्री, हाफ, फ्लैट, आफिसर, रिलीफ, कालर, लीडर, सोशलिस्ट, ग्रुप, वोटिंग, प्रेसिडेण्ड, स्पीच, मेम्बर, फंक्शन, मीटिंग, ट्रेक्र, लोउर कोर्ट, इत्यादि। अंग्रेजी शब्दों के अपभ्रंश रूप नागार्जुन की रचनाओं में बहुतायत से प्राप्त होते हैं कुछेक उदाहरण द्रष्टव्य है– लाटफारम, इसटीसन, साइनबोट, कांगरेस, भोलटिमर, कलट्टर, ऐंजन इत्यादि।

3 उर्दू शब्द

नागार्जुन ने उर्दू जैसी भाषा के शब्दों का प्रयोग कर अपनी उदारता का परिचय दिया है। शब्द उस काल में लोक प्रचलित थे। इनके देशी संस्कार की ओर ही कवि की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। ऐसी प्रमुख शब्द है–तालीम, हकूमत, मखौल, आबरू, शिफा, मुवक्किल, मुलाकात, सदर आदि।

4 तद्भव व देशी शब्द

नागार्जुन ने स्थानीय मैथिल भाषा के शब्दों का अपनी भाषा में बहुयायत से प्रयोग किया है। उनके प्राय सभी उपन्यासों में इस प्रकार के शब्द आये है। जिनके हिंदी अभिप्राय उन्हों पृष्ठ के नीचे अथवा उपन्यास के अंत मे दिए है। लोक को अपने सच्चे स्वाभाविक रंगों में प्रस्तुत करना शायद इस प्रकार के प्रयोगों का अभीष्ट हो सकता है। इसके अतिरिक्त इनके माध्यम से सम्पूर्ण अंचल को अपने वास्तविक रूप में उभार पाने में लेखक सफल रहा हैं यदि उपन्यास में इनके स्थान पर हिंदी पर्याय रख दिये जाये तो वह उपन्यास के प्रभाव एवं अन्विति को प्रभावित करते हैं।

इसी प्रकार के शब्दों के लोक तात्वि व लोक सांस्कृतिक संदर्भ बहुत ही स्पष्ट है। इनका प्रयोग उपयुक्त प्रसंगों में लोकगत रीतियों, प्रथाओं, मान्यताओं वे मुहावरों जैसी कथन प्रवृत्ति व बोलचाल की लोकतात्विक विशेषताओं को प्रकट करता है।

कबकबी, भोमिन, आंच, अमराई, सोहर, परछन, ऐपन, गोरस, अंजोरिया, तातील, बथान, सेर, टण्टा, अंटी, चुनौटी, मटियाना, पीरौंछ, अन्दोसा, असर बंजर, पनियाही तलइया, मुहार, दतुअन, ओजन, अंगनई, अथाजाल, जजमनिका, माहुर, सेंथ, अदगोई, बदगोई जैसी शब्दों को नागार्जुन ने विशिष्ट व सामान्य दोनों ही अर्थो में प्रयुक्त किया हैं। लोकतात्विक संदर्भों से युक्त के कारण यह अपना लोकाभिप्राय सहज ही व्यक्त करते हैं।

5 आवतृत्ति मूलक शब्द

ठेठ ग्रामीण प्रभाव उत्पन करने के लिए व पात्रों की विशिष्ट मानसिक स्थिति एवं लोक स्थिति को व्यंजित करने के लिए लेखक द्वारा आवृत्ति मूलक शब्दों का प्रयोग भी हुआ हैं। कपड़ा वपड़ा, फेरन फारन, टीक ठाक, आह ऊह, खान बान, बेर बरवत, पानी वानी, ताक झांक, रूपइया पइसा, दंद भंद इत्यादि।

6 संकर शब्द

नागार्जुन ने अपनी रचनाओं में इन शब्दों का भी प्रयोग किया है। दो भाषाओं के शब्दों के संयोग से संकर शब्दों के निर्माण में नागार्जुन सिद्धहस्त है उपन्यासों में प्रयुक्त उल्लेखनीय संकर शब्द निम्नलिखित हैं–वोट भिक्षा, जिला कमेटी, जिला आफिस, जिला बोर्ड, रेलगाड़ी, मिल वाले, बैचेन, बेजोड़ इत्यादि।

7 मुहावरे

लोक भाषा की जीवन्तता का प्रतीक मुहावरे होते है। भाषा में प्रवाहमयता और व्यंजनाशक्ति मुहावरों के प्रचलन से आती है। भाषा का मुहावरा भण्डार भषा की समृद्धि की ओर स्पष्ट संकेत करता है। यद्यपि मुहावरे अल्प सभ्य और कम शिक्षित समाज की वस्तु है और इनका प्रयोग जितना ग्रामीण जनों के वार्तालाप में मिलता है उतना नागरी समाज में नहीं। तथापि अब अभिजात वर्ग के लोग भी मुहावरों का प्रयोग करने लगे हैं साहित्य में मुहावरों के प्रयोग से लोकभाष की अभिव्यक्ति का सहज सरलपन आ जाता है व लोकभाषा की नैसर्गिक मिठास भी उनमें प्रविष्ट हो जाती है। मुहावरें वस्तुतः गागर में सागर भरने की क्षमता रखते हैं। वाक्यों व कथानक के बीच प्रयुक्त ये मुहावरे शब्दों को कसावट व अर्थ को विस्तार प्रदान करते है।

उपसंहार

भाषा अथवा वाणी समाज द्वारा समुत्पादित व उपार्जित सांस्तिक प्रतिभा है। यही कारण है कि वह समाज विशेष के सांस्कृतिक

तत्वों से सनी रहती है। यह समाज शास्त्र का सत्य है कि भाषा को धर्म ने सबसे अधिक प्रभावित किया है।" धार्मिक रूढ़ियां, अंधविश्वास व निषेध आदि सबसे भाषा को प्रभावित करते रहे हैं। कहा जा सकता है कि भाषा समाज और सांस्कृति सापेक्ष होती है। परिणमतः लोकतात्विक प्रभावंकन को भाषा की समाज सापेक्षता के सन्दर्भ को लेकर ही स्पष्ट किया जा सकता है।

भारत की आत्मा गांवों में निवास करती है, तो यह कहना सच को रेखांकित करना है कि नागार्जुन के उपन्यासों में इस देश की आत्मा साकार हो उठी है। वे सच्चे अर्थो में जनवादी कथाकार हैं। जनसाधारण की बात को जनसाधारण के लिए जनसाधारण की भाषा में कहने वाले कथाकार। उनकी भाषा में कही कोई घटाटोप नहीं बनावट नहीं अगर कुछ है तो जीवन का सहज प्रवाह।

नागार्जुन का शब्द ज्ञान विस्तृत होने के कारण उनका शब्द भण्डार भी अत्यंत विशाल है। नागार्जुन का भाषा पर पूर्ण अधिपत्य था। नागार्जुन के उपन्यासों में जनसाधारण की सहज व सरल भाषा का प्रयोग हुआ है। नागार्जुन की शिक्षा दीक्षा संस्कृत भाषा के शब्दों का प्रयोग हुआ है। चूंकि इन उपन्यासों की आत्मा गांवों में निवास करती थी एवं सम्पूर्ण अंचल इन उपन्यासों के माध्यम से मूर्त हो उठा है इस कारण सहज एवं सरल हिन्दी व देशज शब्दों का प्रयोग भी नागार्जुन ने यथानुकूल किया है। इसके अतिरिक्त प्रचलित स्थानीय शब्दों के द्वारा लोक को व्यंजित करने का प्रयास भी नागार्जुन ने किया है।

संदर्भ

1. नागार्जुन नई पौध, पृ. 68
2. डॉ. शिव कुमार मिश्र, नया हिन्दी काव्य, पृ. 151
3. डॉ. शिव कुमार मिश्र, नया हिन्दी काव्य, पृष्ठ 189
4. डॉ. आदर्श सक्सेना, हिन्दी के आँचलिक उपन्यास और उनकी शिल्पविधि, पृष्ठ 128
5. डॉ. बेचन शर्मा 'उग्र' स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी साहित्य, पृष्ठ 47
6. डॉ. सुरेश सिन्हा, हिन्दी उपन्यास उद्‌भव और विकास पृष्ठ 513
7. नागार्जुन, कुम्भीपाक, द्वितीय संस्करण सरिता, नवम्बर, 1962 ई.
8. परो, नागार्जुन, पृष्ठ 18 द्रष्टव्य